Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 2, February-2019, ISSN 2230-7540

मंगलेश डबराल के साहित्य में सौन्दर्य

Sumit*

M.A. in Hindi (UGC Net)

शोध सार – *सृजनात्मक सौन्दर्य को कला कहते हैं। भारतीय साहित्य में चैंसठ कलाओं का उल्लेख मिलता है। वात्स्यायन के कामसूत्र (2,2,2) में चैंसठ कलाओं को कुछ भिन्नता से गिनाया है। "पश्चिमी विचारकों के अनुसार कला का इतिहास उस काल से प्रारम्भ होता है, जब गुफा निवासी अपने अवकाश में गुफामित्तियों पर जानवरों को चित्रित करते तथा अपने देवताओं की अप्रबुद्ध प्रतिमाएँ बनाते थे। प्रारंभिक सभ्यता में चित्र तथा शिल्पकलाओं का विकास हो चुका था। मिश्र देश में ईसा पूर्व चतुर्थ शती में पहनने के सुन्दर सुसज्जित आभूषण और असीरिया के तथा क्रीट में मिनोस प्रसाद के चित्र इसके ऐसे अच्छे उदाहरण हैं जिनका पर्यवसान एथिंस के पर्थिनन नामक मन्दिर के निर्माण में हुआ। रोम की कला मुख्यतः स्थापत्यपरक थी, जिसके भवन वर्णमयी पच्चीकारी से सम्पन्न थे। विजंटियन काल नक्काशी, कसीदा और उत्कृष्ट मीनाकारी के लिए प्रसिद्ध रहा है। उसी समय रोगी शिल्प तो पूर्वकृतियों में लक्षित परम्पराओं से मुक्त हुआ और प्रकृतिवादी कला का सूत्रपात हुआ।"*

मुख्य-शब्द: *शिक्षा, अलौकिक सौन्दर्य, इसाई धर्म, परंपरागत भारतीय विद्या।*

----------X----------

मानव की अर्धसंज्ञा में कला की प्रेरणा सन्निहित है जिसका मूल आधार सत्य और सौन्दर्य है। कला-जगत की प्रत्येक कृति सत्य और सौन्दर्य से पुष्ट होती है। सौन्दर्य अलौकिक वस्तु है, उसका निवास आत्मा में है। कला का उद्देश्य इसी अलौकिक सौन्दर्य का प्रकाशन करना है। कलाकार के उच्च मानसिक संसार का कोई विचित्र विचार जब हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है तो उसे हम कला कहते हैं। सौन्दर्य और सत्य में तात्विक एकता है और वास्तव में सौन्दर्य सृजन की पराकाष्ठा वस्तु की सत्यता में है। सत्य और सुन्दर की मिलित प्रेरणा समस्त स्थायी कृतियों का कारण होती है। जिन्हें हम कलाविहित या कलापूर्ण कहते हैं। "कला वही श्रेष्ठ है जो सौन्दर्य की अभिव्यंजना में सहायक हो और सौन्दर्य का कार्य है आनंद की सृष्टि" (टालस्टाय)। एक अंग्रेज विचारक कार्लाइल ने कला को वस्तु की स्वच्छंद आत्मा कहा है।

कला का सामान्य अर्थ सौन्दर्य की रचना है। मनुष्य की जिन कृतियों में सौन्दर्य की रचना प्रमुख होती है, वे कलाएँ कहलाती हैं। चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्यकला, संगीतकला आदि इसके उदाहरण हैं। सौन्दर्य के स्वरूप को परिभाषित करना कठिन कार्य है। फिर भी यह सामान्यतः माना जाता है कि कलाओं में सौन्दर्य की रचना होती है। "संस्कृत भाषा में रूप शब्द सौन्दर्य का पर्याय है। रूप को अभिव्यक्ति का माध्यम कह सकते हैं। कलात्मक अभिव्यक्ति में रूप की रचना की जाती है। इस रचना में रूप का अतिशय उदित होता है। यह रूप का अतिशय ही सौन्दर्य का स्वरूप है तथा इस रूप के अतिशय की रचना ही कला की साधना है।"

कला जीवन का अनुभूतिमय प्रदर्शन है। कला की अमरता एवं चिरंतनता इस तथ्य में है कि कलाकार कितनी कुशलता से अपनी गहरी संवेदना के साथ जीवन से प्राप्त एक प्रेरणाबिन्दु को पूर्ण अनन्यता एवं भावुकता के आश्रय में परिवर्द्धित एवं प्रसारित कर सुन्दर, कल्पनामय एवं पुनीत रूप प्रदान करता है। सच्चे कलाकार के लिए प्रेरणा का अभाव नहीं रहता। सम्पूर्ण जीवन उसके लिए प्रेरणामय है, और यह प्रेरणा सदा एक-दूसरे से भिन्न होती है और इसलिए प्रतिभावान कलाकार की कला में पुनरुक्ति के लिए स्थान नहीं है। उसकी प्रत्येक कृति में वस्तु-साम्य होते हुए भी अपनी मौलिक नवीनता होती है और उसी के लिए वह समादृत होता है। कलाकार का जीवन एक साधना है जिसका एकमात्र लक्ष्य कलागत जीवन को ज्योतिर्मय बनाना है। उसके स्थायित्व के चिंतन में अपनी सत्ता को विलीन कर देना है।

साहित्य जीवन की वस्तु है और उसका मनुष्य के विचारों, द्वंद्वों एवं प्रवृत्तियों से संबंध होता है। जीवन के विभिन्न स्तर समय की परिस्थिति के अनुसार साहित्य में प्रधान और अप्रधान होते आए हैं। किन्तु विश्व के विराट रूप के दर्शन का

www.ignited.in

प्रयत्न एवं आत्मा-परमात्मा के रहस्यमय संबंध के प्रति अनुराग और जिज्ञासा मानव में आरम्भ से ही है। इससे यह स्पष्ट है कि दर्शन के प्रति मनुष्य का स्वाभाविक आकर्षण और प्रवृत्ति है। जिस प्रकार दर्शन का जीवन में अत्यन्त प्रमुख स्थान है, साहित्य (कला) में भी दार्शनिक विचारधारा की परम्परा सदा सजीव और विकसित होती रहती है।

साहित्य सम्पूर्ण मानव जाति की निधि अथवा संपत्ति है। वह उसके सर्वांगीण सौष्ठव एवं उत्थान का साधन बन कर ही अपनी सार्थकता एवं पूर्णता को प्राप्त हो सकता है। एकांगी, एकपक्षीय तथा सीमित उद्देश्य से रचा गया साहित्य, यदि वह सुन्दर ढंग से प्रस्तुत हुआ है, तो कुछ समय तक वह चल तो जाएगा, पर उसका दार्शनिक पक्ष खण्डित ही बना रहेगा और धीरे-धीरे उसका प्रभाव घटता चला जाएगा। महान साहित्य की कोटि में परिगणित होने वाली कलाकृतियों के लिए दार्शनिक तत्व से वेष्ठित होना हम नितांत आवश्यक मानते हैं। यह तत्व साहित्य को एक उच्चे उद्देश्य की प्राप्ति के आदर्श से स्थायी रूप से जोड़ता है।

साहित्य अर्थात् काव्य के विषय में कहा भी गया है कि "काव्य का हृदय पर उतना ही और वैसा ही प्रभाव स्वीकार किया गया है जितना और जैसा किसी परदे के बेलबूटे, मकान की नक्काशी, सर्कस के तमाशे तथा भांडों की लफ्फाजी, उछल-कूद या रोने धोने का पड़ता है।"

कला को शिल्प के नाम से भी अभिहित किया जाता है। प्रत्येक कवि या कलाकार कला, शिल्प या शैली का प्रयोग अपने साहित्य को सुन्दर बनाने के लिए या उसे सही ढंग से सुसज्जित करने के लिए करता है। किसी भी कवि या रचनाकार की भाषा एक सामान्य भाषा से अलग होती है। प्रत्येक काव्य के शिल्प-पक्ष में भाषा का सौन्दर्यात्मक, बिम्बात्मक, रागात्मक, कलात्मक, अलंकारात्मक इत्यादि रूप विद्यमान रहता है। प्रत्येक कवि अपने समय की भाषा का प्रयोग अपने काव्य में करता है। इसलिए मंगलेश डबराल ने भी अपने समय की भाषा का प्रयोग अपने साहित्य में किया है।

भाषा एक ऐसी चीज है जो मानवीय भावों और विचारों को अभिव्यक्त करती है। डॉ. रामप्रकाश के अनुसार - "भाषा शब्द की संरचना संस्कृत की 'भाष्' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है बोलना। इस आधार पर भाषा का अर्थ हुआ - बोली गई या बोली जाने वाली। तात्पर्य यह है कि भाषा वह है जो बोली जाती है।"

भावनाओं का शब्दीकरण भाषा के जरिए होता है। समकालीन कविता पर मंगलेश डबराल कीअपनी अद्वितीय छाप है। डॉ. स्मिता मिश्र का कहना है कि "भाषा अपने आप में सर्जक की पहचान है। भाषा के माध्यम से ही रचनाकार की गहराई समाज - संस्कृति-परम्परा से उसका सरोकार मालूम पड़ता है। भाषा हमें परम्परा से प्राप्त होती है जिसके जागरूक रचनाकार नये संदर्भ और नये तेवर प्रदान करता है। इस तरह भाषा निरन्तर गतिशील रहती है। भाषा के लिए यह आवश्यक है कि वह निरन्तर नये यथार्थ सन्दर्भों के अनुसार खुद को ढ़ालती चले।"

भाषा के बारे में खुद मंगलेश डबराल कहते हैं - "मैं जब कविता लिखने बैठता हूँ तो मुझे लगता है कि मैं जीवन में पहली बार कविता लिख रहा हूँ। भाषा का अभ्यास शायद कम होगा। लेकिन इसका खतरा है कि पुराना शिल्प इतना दबाए रहता है कि उससे मुक्त होना बहुत ही मुश्किल काम है। मैं तो बहुत मुश्किल से पुराने शिल्प से मुक्त होने की कोशिश कर पाया हूँ। अभी मुक्त हो पाया हूँ कि नहीं, मैं नहीं जानता। मैं मानता हूँ कि सबसे पहले कविता किसी इमेज, किसी बिंब, किसी दृश्य, किसी हूक यहाँ तक कि किसी रोने की तरह आती है और फिर मैं कोई एक पंक्ति लिख लेता हूँ। वह पंक्ति कहाँ आएगी? कविता के बीच में आएगी, कैसे आएगी? यह मुझे नहीं मालूम। ऐसी मेरे पास करीब कई हजार पंक्तियाँ इकट्ठी हो चुकी हैं। जिनके आगे-पीछे मैं कुछ नहीं जोड़ पाया। यह जरूर होता है शायद एक पंक्ति या इमेज को मैं जब सोचता हूँ कि क्या इसमें कोई कविता संभव है तो उसमें आगे-पीछे की पंक्तियाँ जोड़ देता हूँ और फिर देखता हूँ कि क्या यह रचना बन पायी है या नहीं।"

वस्तु और कला दोनों से ही कविता का स्वरूप निर्धारित होता है। दोनों ही अपने अस्तित्व के लिए एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। जब किसी रचना का विषय रचनाकार की निजी दृष्टि से भावित होकर रचना के माध्यम से प्रस्तुत होता है तो वह विषय उस रचना की वस्तु बन जाती है। इसलिए काव्य-विधा में प्रस्तुत यथार्थ की वस्तु और उसे अभिव्यक्ति देने के माध्यम कला के बीच सामंजस्य और संतुलन बनाए रखना अति आवश्यक है।

भाषा के संदर्भ में मैं नरेन्द्र मोहन के विचारों को भी यहाँ प्रस्तुत करना चाहूँगी। वे कहते हैं कि - "मैं भाषा को सामाजिक सरोकारों के साथ जोड़ने का कायल हूँ और भाषा की साँचेनुमा प्रकृति को तोड़कर, उसके जरिये सक्रिय कार्यवाही और परिवर्तन के भावों, विचारों को प्रतिफलित करने का इच्छुक हूँ। उन सारी विसंगतियों के साथ जो एक ओर स्थिति के साथ जुड़ी हुई है, दूसरी ओर अस्तित्व के साथ।"

अतः स्पष्ट है कि भाषा काव्य का शरीर है। यह कवि के भावों और विचारों को रूपाकार प्रदान करती है। कवि मंगलेश की भाषा में जो अद्भुत कसावट है और शिल्प पर जो आश्चर्यजनक अधिकार, वह किसी बड़े संगीतकार गायक का कठिन साधना से ही पैदा हो सकता है। मंगलेश की कविताओं से गुजरते समय भाषा के रूप में मनुष्य का भाव-बिम्ब सामने आ जाता है। उनकी कविता में कुछ पात्र बोलता भी है तो एक मात्र चुप्पी के बाद कुछ शब्दा होठों से परे ढकेलता है। ये शब्द भी बेबस होते हैं, यथा-

"मेरी गृहस्थी गिरी मेरे साथ

जेब में रखी हुई चीजें

जिन्हें मैं बार-बार निकालकर

रखता था फिर जेब में।"

साहित्य के शब्दों में सभ्यता, संस्कृति, भावना, विचार और मनुष्यता का वास होता है। शब्दों की ही धुरी पर टिककर कोई साहित्यकार अपनी भावनाओं या अनुभूति की अभिव्यक्ति कर सकता है। मंगलेश डबराल ने बहुत ही कम शब्दों में गम्भीर बात कही है। इन्होंने अपनी रचनाओं में अंग्रेजी, उर्दू, अरबी, फारसी, तत्सम्, तद्भव, मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग अपनी योग्यता और ज्ञान के आधार पर किया है।

अरबी, फारसी, उर्दू एवं अंग्रेजी शब्द

अखबार, तहखाना,मुसाफिर, अफसोस, खबर, आखिरकार, गुलमोहर, तस्वीर, शतरंज, गफलत, खौफनाक, मुआयना, हुलिया।

टॉफी-लेमनजूस, पोस्टर, लॉटरी, ट्रेजडी, मनीऑर्डर, शूट-ऐट-साइट, माइथोलॉजी, स्टॉक, बायोडाटा, इंटरनेशनल, गुड मॉर्निंग, कांटिन्युइटी, आदि।

तत्सम एवं तद्भव शब्द

पीठ, पाश्र्व, सूरज, आग, फूल, पत्थर, नृत्य, ऊंट, जीर्ण, हास्य, गोष्ठी, लोमड़ी, आदि।

युग्म शब्द

हीरे-मोती, तितर-बितर, नहा-धोकर, अस्त-व्यस्त, तीर-कमान, उथल-पुथल, साज-सज्जा, टूटी-फूटी, आमोद-प्रमोद, चहल-पहल, इत्यादि।

विपरीतार्थक शब्द

आरोह-अवरोह, आगे-पीछे, हार-जीत, युवक-युवती, आदान-प्रदानइत्यादि।

जो वाक्यांश अपना साधारण अर्थ छोड़कर किसी अन्य विशेष अर्थ का संप्रेषण करता है, उसे मुहावरा कहते हैं। मुहावरों के प्रयोग से भाषा का सौंदर्य और लावण्यता बढ़ जाती है। डॉ. रामप्रकाश के अनुसार, "किसी विशेष प्रकार की भाषिक प्रतिक्रिया को प्रभावी रूप में व्यक्त करने के लिए कभी कोई व्यक्ति कुछ लाक्षणिक प्रतीकात्मक या अलंकारिक प्रयोग गढ़ लेता है जो धीरे-धीरे लोगों की बिंबात्मक कविता नहीं, दृश्यात्मक ज्यादा है। कविता में एक चीज एक दृश्य के रूप में उपस्थित होती है। बिम्ब एक शारीरिक उपस्थिति है। बिंब कंसेप्चुवल, अवधारणात्मक होता है, जबकि दृश्य परसेप्चुवल है। उसे छुआ, घुमाया जा सकता है, उसमें गति और जीवन है। अगर यह कहा जाए कि कविता दृश्यों का वर्णन है, तो शायद यह मेरे ज्यादा अनुकूल रहेगा।"

दृश्य बिंब ये बिंब होते हैं, जिनमें पूरा दृश्य आँखों के सामने आने समग्र रूपाकार में उपस्थित हो जाए। दृश्य बिंब की महत्ता प्रत्यक्ष अनुभवाश्रित बिंबों में स्वतः स्पष्ट है क्योंकि नेत्र सभी ज्ञानेन्द्रियों में से महत्वपूर्ण है और प्रत्यक्ष देखी हुई और अनुभव की हुई वस्तु के साथ व्यक्ति का संबंध सहज ही बन जाता हे। मंगलेश डबराल के काव्य में ऐसे बिंबों का प्रयोग समग्र रूप से किया गया है -

"मैंने एक दृश्य देखा

जिसमें एक खामोश नदी थी

और कुछ झाड़िया थीं

नदी को घेरे हुए

मैंने उसे देखा और

मैं अभिभूत हुआ

ओ दृश्य मैं तुझे याद रखूंगा

हमेशा

कि मैं अभिभूत हुआ।''

X X X X

शब्दों में ध्वन्यार्थ गुण और संगीतात्मकता काव्य में श्रव्य बिंब का निर्माण करती है। बिम्ब की ताजगी भाषा की सजीव-अर्थवत्ता पर निर्भर रहती है। मंगलेश डबराल के बिम्ब-विधान में श्रव्य-बिंब की प्रवृत्ति प्रमुखता और विविधता लिए हुए है। कवि अपनी 'स्त्रियाँ' कविता में स्त्री के माध्यम से श्रव्य बिंब का सृजन करते हुए लिखते हैं-

''प्रेम करने के अपराध में

उन्हें अच्छी तरह भुला दिया जा चुका होता है

तब कहीं से आती है उनके होने की आवाज

उनका कोई प्रिय गीत अचानक सुनाई दे जाता है

वे धीमी कोमल आवाज में कुछ कहती दिखती है

जिसे एक भारी कोलाहल के बीच

हम सुन नहीं पाते।''

रात्रि के समय कवि को अचानक नदी के बहने की आवाज सुनाई देती है और वे उस आवाज को सुनकर उठ जाते हैं। इस दृश्य को बिंब के रूप में प्रस्तुत करते हुए कवि लिखते हैं-

''रात रात रात

किसी किनारे से नदी के

बहने की आवाज आती है

अकेला मैं उठता हूँ

एक गिलास पानी पीकर सो जाता हूँ।''

जंगली वातावरण में हो रही आवाजों जैसे - कुत्ते का भौंकना, घोड़ोंका हिनहिनाना, सियारों का बोलना, झींगुरों का बोलना आदि का चित्रण कविने किया है जो श्रव्य बिंब के रूप में हमारे सामने उपस्थित हो रही है। जैसे-

''कुछ देर बाद

शुरू होंगी आवाजें

पहले एक कुत्ता भूंकेगा पास से

कुछ दूर हिनहिनायेगा एक घोड़ा

बस्ती के पार सियार बोलेंगे

बीच में कहीं होगा झींगुर का बोलना।''

मंगलेश डबराल की बिम्ब योजना एकदम लाजवाब है। उनके काव्य-संग्रह 'आवाज भी एक जगह है' में संगृहीत कविता 'ब्रेष्ट और निराला' में साहित्य संघर्ष को लेकर एक स्वप्न-बिंब योजना की गई है। जैसे-

''सपने में देखा कोई घर था

घर क्या टूटा-फूटा-सा कमरा एक

कुर्सियाँ रखी हुई थी बहुत पुरानी

बैठे थे उन पर बेर्टोल्ट ब्रेष्ट और निराला

वैसे ही जैसे अपनी-अपनी तस्वीरों में दिखते थे।''

स्वप्न बिंब अर्थात् स्मृति बिंब का एक और उदाहरण हम उनकी 'छुपम-छुपाई' कविता में देख सकते हैं। बच्चों के इस खेल में बच्चों की उत्सुकता का दिलचस्प वर्णन किया गया है। इस खेल में एक चिंता व्यक्त की गई है-

''छुपम-छुपाई खेलते बच्चोंसे कहता हूँ

दौड़ों नहीं।

तुम्हें चोट लग सकती है जगह-जगह नुकीले कोने हैं

कहीं कीलें भी निकली हुई है

ध्यान रखो आराम से खेलो खोजने का खेल।''

कवि मंगलेश के काव्य में कहीं-कहीं पर आस्वाद बिंब के उदाहरण भी देखने को मिल जाते हैं। स्वाद-बिंब का एक छोटा सा उदाहरण इस प्रकार है-

''तुम्हारा प्यार लड्डूओं का थाल है

जिसे मैं खा जाना चाहता हूँ।''

कवि ने प्रेम को थाल में रखे हुए लड्डूओं के समान बताया है जिसे कवि खा जाना चाहता है। इसी क्रम में स्वाद-बिंब को प्रस्तुत करती कुछ और पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"हर चीज का स्वाद अलग-अलग

टिका रहता है उसकी जीभ पर।"

X X X X

"मैं चाहता हूँ स्वाद बचा रहे

मिठास और कड़वाहट से दूर

जो चीजों को खाता नहीं है

बल्कि उन्हें बचाये रखने की कोशिश का

एक नाम है।"

पत्ते का वर्णन करते हुए कहते हैं-

"प्यारे पत्ते हो तुम उन्होंने कहा

कोमल और हिलते हुए

तुम्हारे विचार है तुम्हारी ही तरह।"

प्रकृति के ही रूप पेड़ का बिंब प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

"पृथ्वी और आकाश उनमें एक साथ मौजूद है

जब हम नहीं थे तब भी थे वे पेड़।"

कवि मंगलेश जहां से आए थे, वहाँ की प्रकति और मानवीय विशिष्टता की स्मृति ये दोनों उनकी कविता में एक खास तरह की चमक भरती रही है। इस संदर्भ में खुद मंगलेश स्वीकारते हैं कि - "जब जैसा परिवेश मिलता रहा उसका असर मुझ पर ज्यादा हुआ। मैं चीजों से बहुत प्रभावित होने वाला व्यक्ति हूँ।" कवि मंगलेश ने समाज में स्त्री-दशा को रेखांकित करते हुए निम्न पंक्तियों को प्रतीक-रूप में लेकर पुरूष के द्वारा स्त्री के प्रति छल-कपट को प्रस्तुत किया है, जैसे-

"जबकि पुरूष सिर्फ अभिनय कर रहा है

सबसे अच्छे कपड़े पहने हाथ में एक फूल लिये हुए

वह उसे फुसलाकर एक कगार तक ले जाता है

एकाएक उसके पैसे छीनता है

और उसे नदी में धकेलकर भाग जाता है।"

कवि ने उछलते हुए बच्चों को छोटे बादलों का प्रतीक बताया है। इस प्रकार बच्चों को सुबह की सड़क व छोटे बादलों का प्रतीक माना गया है। कोई भी रचनाकार अपने भावों एवं विचारों को संप्रेषित करने के लिए प्रतीकों का सहारा लेता है। मंगलेश की काव्य-भाषा में हम जगह-जगह प्रतीकों का प्रयोग देख सकते हैं। उन्होंने आधुनिक जीवन के प्रतीकों का भी प्रयोग किया है। वे लिखते हैं-

"इस शहर में दिखाई देते हैं विचित्र लोग

मेरे शत्रुओं से मिलते हैं उनके चेहरे

आरामदेय कारों में बैठकर वे जाते हैं

इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे की ओर।"

शब्दालंकार शब्दों पर आधारित होते हैं, वे नाद सौन्दर्य के प्रतिपादक होते हैं जिससे श्रुति मधुरता आती है। यदि शब्दों के स्थान पर उसका पर्यायवाची रख दें तो अलंकार समाप्त हो जाता है। प्रमुख शब्दालंकार - अनुप्रास, यमक, श्लेष, पुनरुक्ति, वीप्सा आदि हैं। कवि मंगलेश ने अपने काव्य को अनेक प्रकार के शब्दालंकारों से सुसज्जित किया है।

अनुप्रास अलंकार में वर्णों की आवृत्ति का एक विशेष क्रम होता है जिससे काव्य में श्रुति माधुर्य उत्पन्न होता है अर्थात् हम कह सकते हैं कि जहां किसी वर्ण की अनेक बार क्रम से आवृत्ति हो, वहां अनुप्रास अलंकार होता है। मंगलेश डबराल के काव्य में अनुप्रास अलंकार के अनेकों उदाहरण देखने को मिलते हैं। जैसे -

"अपना कोई क्रोध कोई प्रेम कोई विरोध

अपनी ही कोई आग।"

X X X X

"जहाँ पृथ्वी की तरह खून से सनी जगहें ढहे हुए घर

और जिंदा जलाये जाते लोग नहीं थे।"

X X X X

"इस तरह आँसुओं का विभाजन शुरू हुआ

असली आँसू धीरे-धीरे पृष्ठभूमि में चले गये।''

X X X X

''कालातीत कवि अपने जीते जी कालातीत हो जाते हैं।''

X X X X

''परेशान एक आदमी आयेगा हाँफता हुआ

मुझे लू लग गई जी

मेरे पूरे परिवार को।''

जहाँ कोई शब्द एक से अधिक बार प्रयुक्त हो और उसके अर्थ अलग-अलग हों वहां यमक अलंकार होता है।

मंगलेश डबराल के काव्य में ऐसे शब्दों की आवृत्ति बार-बार हो रही है, लेकिन उनका भिन्न अर्थ कहीं-कहीं पर ही मिलता है, जिसके कारण यमक अलंकार की छटा उनके काव्य में देखने को मिल जाती है। यमक अलंकार को प्रस्तुत करना उदाहरण द्रष्टव्य है-

''अगले दिन मिलेगी खुरों की छाप

अगले दिन अपनी देह लगेगी बेकार।''

जहां कोई शब्द एक ही बार प्रयुक्त हुआ हो, किन्तु प्रसंग भेद में उसके अर्थ एक से अधिक हों, वहां श्लेष अलंकार होता है। कवि मंगलेश ने अपने काव्य में श्लेष अलंकार का भी सुन्दर प्रयोग किया है जैसे-

''सेनाएँ कट मरेंगी हत्यारा जीतेगा

हर बार जीतने के बाद

लाशों के बीच अकेला खड़ा

हत्यारा कहेगा

''जोरों से नहीं बल्कि

बार-बार कहता था कि मैं अपनी बात।''

X X X X

'जगह-जगह बिखरी थी घर की परेशानियाँ

साफ दिखती थी दीवारें।''

पुनरूक्तिप्रकाश अलंकार की तरह वीप्सा अलंकार में भी शब्दों की आवृत्ति होती है, लेकिन यह आवृत्ति अर्थ का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए नहीं अपितु मनोवेगों की तीव्रता को प्रकट करने के लिए होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो मन के भावों को प्रकट करने के लिए शब्द की एकया एक से अधिक बार आवृत्ति हो तो वहाँ वीप्सा अलंकार होता है। कवि मंगलेश ने अपने काव्य में इस अलंकार का प्रयोग बहुत ही कम किया है। फिर भी थोड़ा बहुत वर्णन हमें मिल ही जाता है। वीप्सा अलंकार को प्रकट करते उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

''खड़े-खड़े सारा दिन गुजार दूँगा

अपना चेहरा बहुत दिन बाद दिखाऊँगा।''

X X X X

प्रतीप का अर्थ है उल्टा या विपरीत। यह उपमा अलंकार के विपरीत होता है, क्योंकि इस अलंकार में उपमान को लज्जित, पराजित या हीन दिखाकर उपमेय की श्रेष्ठता बढ़ाई जाती है। मंगलेश डबराल ने अपनी रचनाओं में प्रतीप अलंकार की छटा बिखेरी है-

''मृत्यु के करीब इस स्वच्छ रात में

चंद्रमा मेरे चेहरे का

सफेद पत्ता है।''

सादृश्य के कारण जहां उपमेय के लिए दिए गए उपमानों में सन्देह बना रहे तथा निश्चय न हो सके, वहां संदेह अलंकार होता है। सन्देह अलंकार को स्पष्ट करते उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

''शायद अँधेरा था

या एक खाली मैदान

या खड़े होने भर की जगह

उनकी अनेक कविताएँ हैं जिनमें हम भाषा की सहजता पाते हैं। बच्चों के लिए चिट्ठी कविता में सहज, सरल गद्यात्मक शैली देख सकते हैं जैसे-

''प्यारे बच्चों, जीवन एक उत्सव है जिसमें तुम हँसी की तरह फैले हो। जीवन एक हरा पेड़ है जिस पर तुम चिड़ियों की तरह फड़फड़ाते हो। जैसा कि कुछ कवियों ने कहा है कि जीवन एक

www.ignited.in

उछलती गेंद है और तुम उसके चारों ओर एकत्र चंचल पैरों की तरह हो।''

अपनी गद्य-पुस्तक 'कवि का अकेलापन' में मंगलेश डबराल ने कुंवर नारायण की कविता का वर्णन किया है जो निपट गद्य-शैली में लिखी है।

एक अजीब दिन शीर्षक कविता में कुंवर नारायण अपनी दिनचर्या के ब्यौरे इस तरह गद्य-शैली में वर्णित करते हुए लिखते हैं- ''आज सारे दिन बाहर घूमता रहा/और कोई दुर्घटना नहीं हुई/आज सारे दिन लोगों से मिलता रहा/और कहीं अपमानित नहीं हुआ/आज सारे दिन सच बोलता रहा और किसी ने बुरा न माना/आज सबका यकीन किया/और कहीं धोखा नहीं खाया।'

संदर्भ सूची

1. प्रधान संपादक डॉ. नगेन्द्र, भारतीय साहित्य, संस्कृति एवं कला, पृ॰ 407
2. डॉ. रामानन्द तिवारी, 'साहित्य कला', पृ॰ 17
3. डॉ. सुरेन्द्रनाथ त्रिपाठी, साहित्य, कला और रुचि, पृ॰ 12
4. डॉ. रामप्रकाश, मानक हिन्दी संरचना एवं प्रयोग, पृ॰ 11
5. स्मिता मिश्र, गीतफरोश, संवेदना और शिल्प, पृ॰ 60
6. मंगलेश डबराल से विष्णु नागर की बातचीत।
7. गुरचरण सिंह, सुमन पंडित, नरेन्द्र मोहन रचनावली-1, खण्ड-4, पृ॰ 106
8. मंगलेश डबराल, घर का रास्ता, पृ॰ 10
9. मंगलेश डबराल, आवाज भी एक जगह है, पृ॰ 16
10. वही, पृ॰ 39
11. वही, पृ॰ 60
12. मंगलेश डबराल, पहाड़ पर लालटेन, पृ॰ 27
13. वही, पृ॰ 62
14. मंगलेश डबराल, घर का रास्ता, पृ॰ 20
15. वही, पृ॰ 78
16. मंगलेश डबराल, हम जो देखते हैं, पृ॰ 28
17. वही, पृ॰ 75

Corresponding Author

Sumit*

M.A. in Hindi (UGC Net)

mrs.sumit88@gmail.com